International Journal of Research - GRANTHAALAYAH
February 2026 14(2SCE)
समकालीन कला, साहित्य, संगीत एवं नृत्य का विज्ञान एवं समाज विज्ञान से अंतर्संबंध
www.granthaalayah.com

ORIGINAL ARTICLE

THE INDIAN YAJNA-VARAHA ICONOGRAPHIC TRADITION: SCULPTURAL AND PHILOSOPHICAL STUDIES AND CONCEPTUAL ANALOGIES WITH CONTEMPORARY ART

भारतीय यज्ञ-वराह प्रतिमा परंपरा: शिल्पशास्त्रीय एवं दार्शनिक अध्ययन तथा समकालीन कला से वैचारिक सादृश्यता

Gourav Soni [1*], **Dr. Sadhana Chauhan** [2]
[1] Research Scholar, Government Maharani Laxmibai Girls P.G. College, Kila Bhawan, Devi Ahilya University, Indore, Madhya Pradesh, India
[2] Assistant Professor and HOD of Painting (Retire), Maharaja Bhoj Government Post Graduate College, Dhar, Madhya Pradesh, India

ABSTRACT

English: The present paper is dedicated to unique sculpture from the ancient Indian iconographic traditions, which strongly demonstrate the evolved practice of Indian iconography. Indian iconography has not been limited to the mere external beauty of deities, but has also been a tangible expression of philosophical, cosmic, and cultural thought. Among the ten incarnations of Vishnu, the third incarnation - the Varaha avatar is particularly significant because it is directly linked to the salvation of the earth and environmental balance.

This paper presents a study of the unique and rare Yajna Varaha and other Varaha statues crafted within the Indian iconographic tradition. These statues are also known by names such as Pashu Varaha, Vishvarupa Varaha, and Sarvadevamaya Varaha. These statues depict Lord Vishnu in a fully boar form, with various deities etched throughout his body, making him not merely an incarnation of Vishnu but a symbol of all cosmic forces.

This research analyzes the concept of the Varaha avatar, its iconographic features, and philosophical meanings, based on Vedic literature, scriptures, Puranas, Shilpa Shastra texts, and direct sculptural observation. A brief comparative study of complete Varaha statues preserved in the Central Museum (Indore), Eran District-Sagar (Madhya Pradesh), and the Gujari Mahal Museum (Gwalior) is an important aspect of this research. It also elucidates how the concept of the Varaha avatar is deeply connected to contemporary art issues such as environmental protection and the relationship between nature and humans.

Conclusively, this research establishes that the Varaha statue is not only a classical religious symbol but also holds profound ideological relevance and relevance in contemporary art and environmental discourse.
Keywords: Varaha avatar, Yagna varaha, Yajna Varaha Sculpture, Indian iconography, Vishnu Dashavatara, Sarvadevamay Varaha, Shilpa Shastra, Puranic tradition, cosmic symbolism, environmental consciousness, Indian classical art, iconography, Sculpture Studies, indian contemporary art.

*Corresponding Author:
Email address: Gourav Soni (gart9617916601@gmail.com)
Received: 19 December 2025; **Accepted:** 15 January 2026; **Published** 27 February 2026
DOI: 10.29121/granthaalayah.v14.i2SCE.2026.6752
Page Number: 150-155
Journal Title: International Journal of Research -GRANTHAALAYAH
Journal Abbreviation: Int. J. Res. Granthaalayah
Online ISSN: 2350-0530, **Print ISSN:** 2394-3629
Publisher: Granthaalayah Publications and Printers, India
Conflict of Interests: The authors declare that they have no competing interests.
Funding: This research received no specific grant from any funding agency in the public, commercial, or not-for-profit sectors.
Authors' Contributions: Each author made an equal contribution to the conception and design of the study. All authors have reviewed and approved the final version of the manuscript for publication.
Transparency: The authors affirm that this manuscript presents an honest, accurate, and transparent account of the study. All essential aspects have been included, and any deviations from the original study plan have been clearly explained. The writing process strictly adhered to established ethical standards.
Copyright: © 2026 The Author(s). This work is licensed under a Creative Commons Attribution 4.0 International License.
With the license CC-BY, authors retain the copyright, allowing anyone to download, reuse, re-print, modify, distribute, and/or copy their contribution. The work must be properly attributed to its author.

Hindi: यह पेपर पुरानी भारतीय आइकॉनोग्राफिक परंपराओं की अनोखी मूर्तियों को समर्पित है, जो भारतीय आइकॉनोग्राफ़ी के विकसित तरीके को मज़बूती से दिखाती हैं। भारतीय आइकॉनोग्राफ़ी सिर्फ़ देवताओं की बाहरी सुंदरता तक ही सीमित नहीं रही है, बल्कि यह दार्शनिक, कॉस्मिक और सांस्कृतिक सोच का एक ठोस रूप भी रही है। विष्णु के दस अवतारों में से, तीसरा अवतार - वराह अवतार खास तौर पर महत्वपूर्ण है क्योंकि यह सीधे पृथ्वी के उद्धार और पर्यावरण संतुलन से जुड़ा है।

यह पेपर भारतीय आइकॉनोग्राफ़िक परंपरा में बनाई गई अनोखी और दुर्लभ यज्ञ वराह और दूसरी वराह मूर्तियों की स्टडी पेश करता है। इन मूर्तियों को पशु वराह, विश्वरूप वराह और सर्वदेवमय वराह जैसे नामों से भी जाना जाता है। इन मूर्तियों में भगवान विष्णु को पूरी तरह से सूअर के रूप में दिखाया गया है, और उनके पूरे शरीर पर अलग-अलग देवताओं की मूर्तियाँ बनी हुई हैं, जो उन्हें सिर्फ़ विष्णु का अवतार ही नहीं बल्कि सभी कॉस्मिक शक्तियों का प्रतीक बनाती हैं। यह रिसर्च वैदिक साहित्य, धर्मग्रंथों, पुराणों, शिल्प शास्त्र की किताबों और सीधे मूर्तिकला के अवलोकन के आधार पर वराह अवतार के कॉन्सेप्ट, उसकी आइकॉनिक विशेषताओं और फिलोसोफिकल मतलबों का एनालिसिस करती है। सेंट्रल म्यूज़ियम (इंदौर), एरन डिस्ट्रिक्ट-सागर (मध्य प्रदेश) और गूजरी महल म्यूज़ियम (ग्वालियर) में रखी पूरी वराह मूर्तियों की एक छोटी सी तुलना इस रिसर्च का एक ज़रूरी पहलू है। यह यह भी बताता है कि वराह अवतार का कॉन्सेप्ट आज के आर्ट के मुद्दों जैसे एनवायरनमेंट प्रोटेक्शन और नेचर और इंसानों के बीच के रिश्ते से कैसे गहराई से जुड़ा है।

आखिर में, यह रिसर्च यह साबित करती है कि वराह मूर्ति न केवल एक क्लासिकल धार्मिक सिंबल है, बल्कि आज की आर्ट और एनवायरनमेंटल बातचीत में भी गहरी आइडियोलॉजिकल रेलेवेंस और रेलिवेंस रखती है। कीवर्ड: वराह अवतार, यज्ञ वराह, यज्ञ वराह मूर्तिकला, भारतीय आइकनोग्राफी, विष्णु दशावतार, सर्वदेवमय वराह, शिल्प शास्त्र, पौराणिक परंपरा, कॉस्मिक सिंबॉलिज्म, पर्यावरण चेतना, भारतीय क्लासिकल आर्ट, आइकनोग्राफी, मूर्तिकला अध्ययन, भारतीय कंटेम्पररी आर्ट।

Keywords: Varaha Avatar, Yagna Varaha, Yajna Varaha Sculpture, Indian Iconography, Vishnu Dashavatara, Sarvadevamay Varaha, Shilpa Shastra, Puranic Tradition, Cosmic Symbolism, Environmental Consciousness, Indian Classical Art, Iconography, Sculpture Studies, Indian Contemporary Art, वराह अवतार, यज्ञ वराह, यज्ञ वराह मूर्तिकला, भारतीय प्रतीक-विद्या, विष्णु दशावतार, सर्वदेवमय वराह, शिल्प शास्त्र, पौराणिक परंपरा, ब्रह्मांडीय प्रतीकवाद, पर्यावरण चेतना, भारतीय शास्त्रीय कला, प्रतीक-विद्या, मूर्तिकला अध्ययन, भारतीय समकालीन कला

प्रस्तावना

भारतीय कला परंपरा में प्रतिमा केवल सौंदर्यबोध का साधन नहीं रही है, बल्कि वह भारतीय दर्शन, धर्म और जीवन-दृष्टि की सजीव अभिव्यक्ति भी रही है। इस परंपरा का लक्ष्य आकृतियों के बाह्य सौन्दर्य को अपनी उत्कृष्टता में प्रदर्शित करने के साथ उसके आत्मीय भाव को भी दर्शक के समक्ष प्रस्तुत कर उसे हृदय तक छू लेना भी था । प्रतिमा-विज्ञान के माध्यम से भारतीय कलाकारों ने अमूर्त दार्शनिक अवधारणाओं को मूर्त रूप प्रदान किया है। और उन्हे विश्व के सबसे सुंदर रूपों में प्रस्तुत कर भारत के सौन्दर्यदर्शन, प्रतीकात्मक विकास का अद्वितीय उदाहरण भी सहजता के साथ विश्व के सन्मुख व्यक्त किया। यही कारण है कि भारतीय मूर्तिकला को केवल शिल्प न मानकर "दृश्य दर्शन" के रूप में देखा जाता है।

भारतीय वैदिक ग्रंथों एवं खासकर वैष्णव पुराणों में वर्णित विष्णु के दशावतारों में तीसरा - वराह अवतार जिसमें भगवान विष्णु, वराह अर्थात सूकर रूप धारण किए ब्रह्मा के नासा छिद्र से उत्पन्न होते है तथा दैत्य हिरण्याक्ष, जिसने भुदेवी को पानी में अथवा रसातल में बंदी बना रखा था, उसका संहार कर भुदेवी का उद्धार करते हैं, और सौर मण्डल में यथास्थान पुनःस्थापित करते है, इसी कारण वराह अवतार विशेष महत्व रखता है क्योंकि यह अवतार सीधे पृथ्वी, जल, प्रकृति और जीवन-रक्षा से जुड़ा हुआ है। अन्य अवतार जहाँ मानव या दैवी संघर्षों पर केंद्रित हैं, वहीं वराह अवतार सृष्टि के भौतिक आधार पृथ्वी के संरक्षण का प्रतीक है। जो आज के युग की वैश्विक समस्या (जो की पर्यावरणीय संसाधनों का अंधाधुंध दोहन है) के निवारण से पर्याप्त रूप से सादृश्यता रखता है।

भारतीय प्रतिमा विज्ञान में वराह अवतार के कई रूपों का या कहे तो कई प्रकार के शिल्पों के बनाने का आदेश मिलता हैं। जिसमें पहला जो की मानव शरीर के साथ, वराह मुख धारण किए। इस प्रतिमा को शिल्पशास्त्रों में नृवराह कहा गया हैं। एवं दूसरा यज्ञ वराह (जो की इस शोध पत्र का मुख्य विषय भी हैं), इसमे भगवान विष्णु की सम्पूर्ण काया को वराह रूप में दर्शाया गया हैं, साथ ही उनके पूरे शरीर पर कई सौ देवी देवताओं, ऋषि मुनियों आदि की प्रतिमाएं अंकित की गई हैं। और यही बात इस प्रतिमा को विशिष्ट और दुर्लभ बनाती हैं। इस प्रकार की प्रतिमाओं को विद्वानों द्वारा कई अन्य नामों से भी संबोधित किया गया हैं, जिसमें पशु वराह, विश्वरूप वराह, सर्वदेवमय वराह, एवं पूर्ण वराह प्रमुख हैं। यह वराह प्रतिमा इस अवधारणा का चरम और दार्शनिक रूप प्रस्तुत करती है। इसमें वराह को केवल एक देवता के रूप में नहीं, बल्कि संपूर्ण ब्रह्मांड के आधार के रूप में दर्शाया गया है। यह शोध-पत्र इसी प्रतिमा-परंपरा के शास्त्रीय, दार्शनिक तथा समकालीन पक्षों का विस्तारपूर्वक अध्ययन प्रस्तुत करता है।

वराह अवतार की अवधारणा एवं ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

वराह अवतार की अवधारणा का मूल वैदिक साहित्य में मिलता है। सर्वप्रथम ऋग्वेद (1/61/7) मे वराह रूप का उल्लेख मिलता है । तैत्तिरीक आरण्यक (6/3/5/2) मे भी वराह अवतार का कथन उल्लेखनीय है, जिसके अनुसार जब पृथ्वी ब्रह्मांडीय जल मे डूब गई थी, तो सौ भुजाओ वाले वराह ने पृथ्वी का उद्धार किया। शतपथ ब्राह्मण में वराह को पृथ्वी के उद्धारक के रूप में वर्णित किया गया है, जहाँ वह यज्ञ पुरुष के प्रतीक के रूप में सामने आता है। यहाँ वराह कोई साधारण पशु नहीं, बल्कि ब्रह्मांडीय व्यवस्था को पुनः स्थापित करने वाली शक्ति है।

पुराण काल में यह अवधारणा और अधिक स्पष्ट तथा कथात्मक रूप में विकसित होती है। वाल्मीकि रामायण (3/45/13) मे भी वराह रूप का उल्लेख मिलता है परंतु यहाँ वराह को ब्रह्मा का रूप बताया गया हैं । महाभारत (102/32), (126/12) मे वराह को विष्णु रूप कहा गया है। विष्णु पुराण और श्री मद्भागवत पुराण (1/3), (3/13) में उल्लेखित है की वराह अवतार हिरण्याक्ष का वध कर पृथ्वी को जल से बाहर निकालते हैं। इस कथा का प्रतीकात्मक अर्थ यह है कि अराजकता और अंधकार से व्यवस्था और संतुलन की पुनः स्थापना।

प्रचलित पुराण कथा के अनुसार प्रलयकाल में ब्रह्मा के नासाछिद्र से अंगूठे के आकार का वराह शिशु प्रकट हुआ, जो क्षणमात्र में विराट पर्वताकार रूप में विकसित हुआ। भीषण गर्जना के साथ भगवान् वराह ने प्रलय-सागर में प्रवेश कर अपने वज्रसदृश खुरों एवं तीक्ष्ण दाढ़ों से रसातल में स्थित पृथ्वी को खोजा। उन्होंने पृथ्वी को दाढ़ों पर उठाकर पुनः उसके स्थान पर स्थापित किया तथा उसमें आधार-शक्ति का संचार किया। इस दैवी कार्य से देवगण एवं ऋषिगण प्रसन्न हुए। इसी प्रसंग में दैत्य हिरण्याक्ष से उनका घोर युद्ध हुआ, जिसमें भगवान् वराह के चरण-प्रहार से उसका वध हुआ। शास्त्रों के अनुसार हिरण्याक्ष भगवान् का शापग्रस्त पार्षद था। इस प्रकार वराहावतार के माध्यम से भगवान् विष्णु ने सृष्टि-संरक्षण एवं धर्म-स्थापना के अपने दायित्व का निर्वहन किया।

इतिहासकारों और विद्वानों के अनुसार वराह अवतार की परिकल्पना कम से कम 3000-3500 वर्ष प्राचीन है। गुप्त काल तक आते-आते वराह की प्रतिमाएँ मंदिर स्थापत्य और मूर्तिकला में प्रमुख स्थान ग्रहण कर लेती हैं।

वराह का प्रतीकात्मक महत्व

इस संदर्भ में यह प्रश्न अत्यन्त महत्वपूर्ण हो जाता है कि पृथ्वी के उद्धार के लिए किसी अन्य पशु अथवा मानव रूप के स्थान पर सूकर (वराह) रूप की ही परिकल्पना क्यों की गई ? सूकर ऐसा प्राणी है जिसका अस्तित्व भूमि से प्रत्यक्ष और गहन रूप से जुड़ा हुआ है। वह भूमि को खोदता है, उसी में निवास करता है और उसी से अपना पोषण प्राप्त करता है। इस कारण उसका जीवन और व्यवहार पृथ्वी के साथ सहज रूप से एकात्म माना जाता है।

भारतीय प्रतीकात्मक चिंतन में सूकर का यह स्वभाव उसे पृथ्वी का केवल उद्धारक नहीं, बल्कि स्वयं पृथ्वी का अभिन्न अंग बना देता है। इस प्रकार वराह अवतार केवल एक दैवी शक्ति का प्रतिनिधित्व नहीं करता, बल्कि वह प्रकृति के भीतर निहित उसी मौलिक शक्ति का प्रतीक है जो विनाश के बाद पुनर्सृजन को संभव बनाती है। यह अवधारणा भारतीय दर्शन में मानव और प्रकृति के बीच विद्यमान गहरे, पारस्परिक संबंध को रेखांकित करती है, जहाँ मनुष्य को प्रकृति का स्वामी नहीं, बल्कि उसका सहचर और अंग माना गया है। इस दृष्टि से वराह अवतार भारतीय मिथकीय परंपरा में पर्यावरणीय चेतना और सृष्टि-संरक्षण की एक अत्यन्त महत्वपूर्ण वैचारिक अभिव्यक्ति के रूप में प्रतिष्ठित होता है।

यज्ञ वराह: प्रतिमा-विज्ञान एवं शास्त्रीय लक्षण

यज्ञ वराह प्रतिमा भारतीय प्रतिमा-विज्ञान की एक अत्यंत विशिष्ट और दुर्लभ परंपरा का प्रतिनिधित्व करती है, जिसमें वराह को मात्र विष्णु के एक अवतार के रूप में न देखकर सम्पूर्ण यज्ञात्मक ब्रह्मांड और सृष्टि-व्यवस्था के मूर्त अधिष्ठान के रूप में अभिव्यक्त किया गया है। इस परंपरा में वराह की संकल्पना एक दैवी उद्धारक तक सीमित न रहकर सृष्टि के स्थायित्व, संतुलन और निरंतरता की आधारशिला के रूप में विकसित होती है। पुराणिक ग्रंथों में वर्णित है कि जब पृथ्वी जल में निमग्न होकर अपनी स्थिरता खो देती है, तब वराह अवतार का प्राकट्य होता है। इसी दार्शनिक पृष्ठभूमि के कारण यज्ञ वराह की प्रतिमाओं में वराह का स्वरूप अत्यंत स्थिर, भारयुक्त और दृढ़ रूप में गढ़ा गया है, जिससे यह भाव सुदृढ़ होता है कि वही सम्पूर्ण सृष्टि का आधार है।

प्रतिमा-विज्ञान की दृष्टि से यज्ञ वराह को प्रायः पूर्ण पशु-आकृति में निर्मित किया जाता है। इस रूप में वराह किसी भी प्रकार के मानव-मिश्रित तत्वों से पूर्णतः रहित रहता है। मध्य भारत के ऐरण एवं मंदसौर क्षेत्र से प्राप्त वराह प्रतिमाएँ इस शिल्प-परंपरा के उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत करती हैं। इन प्रतिमाओं में वराह का मुख चैड़ा, उन्नत तथा अग्रभाग की ओर विकसित दिखाई देता है। मुखाकृति में उग्रता और दिव्यता का संतुलित संयोजन दृष्टिगोचर होता है। नेत्र सामान्यतः गोल, सजग और जागरूक भाव से युक्त होते हैं, जो संरक्षण, चेतना और उत्तरदायित्व के भाव को अभिव्यक्त करते हैं। शरीर की संरचना विशाल, पुष्ट और स्थिर मुद्रा में की जाती है, जिससे पृथ्वी को धारण करने की उसकी क्षमता का प्रतीकात्मक बोध होता है।

यज्ञ वराह प्रतिमा में भूदेवी का अंकन एक अनिवार्य एवं अर्थपूर्ण तत्व के रूप में उपस्थित रहता है। पुराणों के अनुसार वराह अपने दंतों पर पृथ्वी को धारण कर समुद्र से बाहर निकालते हैं। इसी कारण भूदेवी को प्रायः वराह के दाढ़ों के समीप, थूथन के पास दर्शाया जाता है। भूदेवी का स्वरूप सामान्यतः कोमल, सौम्य और लघु आकार में प्रस्तुत किया जाता है, जो वराह के विराट और शक्तिशाली शरीर के साथ एक गहन प्रतीकात्मक संतुलन स्थापित करता है। यज्ञ वराह प्रतिमा की संपूर्ण संरचना में किसी प्रकार की तीव्र गतिशीलता या आक्रामकता का अभाव पाया जाता है। इसके स्थान पर एक दिव्य स्थैर्य और गंभीरता का भाव प्रधान होता है। यह स्थैर्य इस विचार को रेखांकित करता है कि वराह केवल किसी एक क्षण के संकट का निवारण करने वाले देव नहीं हैं, बल्कि वे ब्रह्मांडीय व्यवस्था के स्थायी आधार हैं, जिन पर सम्पूर्ण सृष्टि की संरचना टिकी हुई है।

यज्ञ वराह प्रतिमा का सर्वाधिक विशिष्ट और महत्वपूर्ण प्रतिमा-विज्ञानात्मक पक्ष उसका देव-आवृत शरीर है। इस परंपरा में वराह की देह केवल एक भौतिक आकृति नहीं रह जाती, बल्कि वह सम्पूर्ण ब्रह्मांड का प्रतीकात्मक रूप ग्रहण कर लेती है। विष्णु पुराण, श्री मद् भागवत पुराण तथा ब्रह्माण्ड पुराण में वराह को स्वयं यज्ञ-स्वरूप निरूपित किया गया है अर्थात् उनका प्रत्येक अंग यज्ञ के किसी न किसी तत्व का प्रतिनिधित्व करता है। इसी दार्शनिक अवधारणा के आधार पर यज्ञ वराह प्रतिमाओं में वराह के शरीर पर विविध देवी-देवताओं, ऋषियों, लोकपालों तथा ब्रह्मांडीय शक्तियों का सूक्ष्म एवं सुविचारित अंकन किया जाता है।

इन प्रतिमाओं में देव आकृतियों की व्यवस्था एक क्रमबद्ध और संरचनात्मक प्रणाली के अंतर्गत की जाती है। सामान्यतः इसमें

- त्रिदेव- ब्रह्मा, विष्णु (स्वयं वराह रूप में) और महेश।
- सप्त मातृका- ब्राह्मणी, माहेश्वरी, वैष्णवी, कौमारी, वराही, नृसिंघी, विनायकी (गणेशानी)।
- दशावतार- मत्स्य, कूर्म, वराह, नृसिंह, वामन, परशुराम, राम, कृष्ण, बलराम (या बुद्ध - क्षेत्रीय परंपरा अनुसार), कल्कि।
- अष्ट वसु- धर, अनिल, अनल, प्रत्युश, प्रभास, सोम, ध्रुव, पूषा।
- एकादश रुद्र- शिव के विभिन्न रूप-शंकर, ईशान, पिनाकी, अघोर, भीम, कपाली, पशुपति, महादेव, त्र्यम्बक, रुद्र, सर्व।
- ग्रह देवता- सूर्य, चंद्र, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि (साथ में राहु केतु)।

- द्वादश आदित्य- सूर्य के 12 स्वरूप-विवस्वान, मित्र, अर्यमा, पूषा, त्वष्टा, सविता, भग, धाता, विधाता, वरुण, अंश, इन्द्र।
- इन्द्र और अन्य देव- इन्द्र, अग्नि, वायु, वरुण, यम, कुबेर आदि।
- सप्त ऋषि- मरीचि, अत्रि, अंगिरा, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, वशिष्ठ।
- अष्ट-दिक्पाल- इन्द्र (पूर्व), अग्नि (आग्नेय), यम (दक्षिण), नैऋति, वरुण (पश्चिम), वायु (वायव्य), कुबेर (उत्तर), ईशान (ईशान्य)।
- प्रजापति- ब्रह्मा के मानस पुत्र, सृष्टि-विस्तार के प्रतीक।
- भगवान की लीलाएँ- समुद्र मंथन, श्रीकृष्ण जन्म, पूतना वध, गोवर्धन धारण, पृथ्वी उद्धार।
- चतुर्वेद- ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद।
- आश्विन कुमार- नासत्य, दस्त्र।

इस प्रकार वराह का शरीर सम्पूर्ण दिक्-व्यवस्था और ब्रह्मांडीय संतुलन का मूर्त स्वरूप बन जाता है। यज्ञ-संरचना के संदर्भ में पुराणों में वराह के शरीर को प्रत्यक्ष यज्ञ-वेदिका के रूप में देखा गया है। उनका मुख अग्नि का प्रतीक माना गया है, जिह्वा को हवि से, दांतों को सोम से, कंठ को सामवेद से तथा श्वास को वायु तत्व से जोड़ा गया है। इस प्रकार वराह की देह एक सतत गतिमान यज्ञ का रूप ग्रहण कर लेती है, जिसके माध्यम से सृष्टि का निरंतर संचालन और संरक्षण होता रहता है। यह प्रतिमा इस गहन दार्शनिक विचार को प्रतिपादित करती है कि जब तक यज्ञ अर्थात् कर्तव्य, संतुलन और कर्म सक्रिय रहता है, तब तक पृथ्वी और सम्पूर्ण सृष्टि सुरक्षित बनी रहती है।

प्रमुख यज्ञ वराह प्रतिमाएं: संक्षिप्त तुलनात्मक विवेचन

तालिका 1

तालिका 2 प्रस्तुत तालिका में मध्य भारत से प्राप्त तीन प्रमुख यज्ञ वराह प्रतिमाओं का संक्षिप्त तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।

तुलनात्मक बिंदु	ऐरण, मध्यप्रदेश की यज्ञ वराह	केंद्रीय संग्रहालय, इंदौर मे संग्रहीत यज्ञ वराह	गुजरी महल संग्रहालय, ग्वालियर मे संग्रहीत यज्ञ वराह
प्राप्ति-स्थल	ऐरण (प्राचीन)	बूंजर, मंदसौर	बडोह,जिला- विदिशा
काल (लगभग)	5वीं शताब्दी ई	11वीं शताब्दी ई.	11वीं-12वीं शताब्दी ई.
राजवंश-शासक	राजा ध्यान विष्णु	परमार वंश	प्रतिहार वंश
वर्तमान स्थिति	ऐरण	केंद्रीय संग्रहालय, इंदौर	गुजरी महल संग्रहालय
आकार (लगभग)	अत्यंत विशाल 14.11.5 फुट	आपेक्षाकृत छोटी 110.50.35 से.मी.	मध्यम विशाल 5.5.5.2 फुट
शरीर बनी देव व अन्य आकृतियाँ	लगभग 1185 लघु प्रतिमा	लगभग 250 से ज्यादा लघु प्रतिमा	लगभग 779 लघु प्रतिमा
विलक्षणता	स्थिरता, भारी हाथी के समान पैर, पीठ पर बैल की कूबड़ के समान आकृत्ति, सप्त गृह, शिला लेख	गतिमान आकृति, दायां अग्र पैर थोड़ा जमीन से उठा आगे बढ़ने की स्थिति	आकृति स्थिर परंतु अपेक्षाकृत थोड़ा पीछे की झुकी हुई, आधार मे भी चारों और लघु प्रतिमा

उपरोक्त तुलनात्मक अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि यज्ञ वराह प्रतिमा की मूल वैचारिक परंपरा तीनों स्थलों पर समान बनी रहती है, किंतु कालक्रम एवं क्षेत्रीय शिल्प परंपराओं के अनुसार उसके रूप, शैली और अभिव्यक्ति में स्पष्ट भिन्नताएँ परिलक्षित होती हैं। उक्त प्रतिमाओं की तुलना को और स्पष्टः निष्कर्ष में उल्लेखित किया गया हैं।

समकालीन कला में पर्यावरणीय प्रासंगिकता

आज का युग पर्यावरणीय संकट का युग है। जलवायु परिवर्तन, जैव-विविधता का ह्रास और पृथ्वी के संसाधनों का अंधाधुंध दोहन वैश्विक चिंता के विषय हैं। समकालीन कलाकार इन विषयों को अपनी कला में प्रमुखता से उठा रहे हैं। भारत के कई समकालीन कलाकार ऐसे हैं जो अपनी कला के माध्यम से बढ़ते पर्यावरणीय संकट और पारिस्थितिक असंतुलन को वैश्विक स्तर पर प्रस्तुत कर रहे हैं। वर्ष 2026 तक के परिदृश्य में मैं कुछ प्रमुख कलाकारों और उनके काम का विवरण यहाँ दे रहा हूँ

- रवि अग्रवाल (दिल्ली)-यमुना नदी प्रदूषण, फोटोग्राफी, मछली पकड़ने वाले समुदायों का संकट।
- विभा मल्होत्रा (दिल्ली)-शहरीकरण, पंचतत्व (हवा-पानी-मिट्टी), धातु के मोतियों से विशाल इंस्टॉलेशन।

- असीम वकिफ (दिल्ली)-बांस और कचरे का उपयोग, शहरी कचरा प्रबंधन, विशाल संरचनाएं।
- ठुकराल और टैग्रा (दिल्ली-पंजाब) कृषि संकट, वायु प्रदूषण, इंटरैक्टिव आर्ट और गेम्स।
- साजन मणि (कोच्चि-बर्लिन) जलवायु न्याय, नदियों और आर्द्रभूमि का संरक्षण।
- जगन्नाथ पांडा (ओडिशा) शहरी विस्तार बनाम प्रकृति, मिश्रित माध्यम पेंटिंग।
- कुलप्रीत सिंह (पंजाब) पराली जलाना, वायु प्रदूषण, मिट्टी की उर्वरता का नुकसान।

उक्त कलाकारों द्वारा बनाई गई अथवा बनाई जा रही कलाकृतियों का मुख्य विषय पर्यावरण संरक्षण ही है। इनके अलावा भी कई कलाकार और जो पर्यावरण और प्रकृति के इर्दगिर्द ही अपनी कलाकृतियों का सृजन करते हैं। उद्देश्य साफ है, पृथ्वी को केवल संसाधन नहीं, बल्कि जीवन का आधार मानना।

निष्कर्ष

यज्ञ वराह प्रतिमा भारतीय प्रतिमा-विज्ञान की एक अद्वितीय और उच्च कोटि की उपलब्धि है। प्रतिमा लक्षणों की बात करे तो विभिन्न कालों मे गढ़ी गई वराह प्रतिमाओं के प्रत्यक्ष अवलोकन से हमें साफ दिखाई देता हैं की समय के साथ यज्ञ वराह की प्रतिमाओं में गतिशीलता और यथार्थता की वृद्धि देखने को मिलती हैं।

अन्य पक्षों की बात करे तो यह प्रतिमाएं धार्मिक आस्था, दार्शनिक चिंतन और पर्यावरणीय चेतना को एक साथ जोड़ती है। समकालीन कला के वैचारिक संदर्भ में भी वराह अवतार की प्रतिमाएं आज भी उतनी ही सार्थक है जितनी अपने निर्माण काल में थी। अतः इसकी अवधारणा भी अत्यंत प्रासंगिक और सादृश्यता लिए हुए प्रतीत होती है क्योंकि ये प्रतिमाएं अथवा अवतार भी तो कही न कही पर्यावरण संरक्षण एवं पृथ्वी के उद्धार की ही बात करता हैं।

इस प्रकार यह प्रतिमा प्राचीन होते हुए भी समकालीन विमर्श में पूरी तरह प्रासंगिकता और सादृश्यता लिए हुए है। यह शोध सिद्ध करता है कि भारतीय शास्त्रीय कला परंपरा आज के वैश्विक संदर्भों में भी नई दृष्टि और समाधान प्रस्तुत करने में सक्षम है।

चित्र 1

चित्र 1 केंद्रीय संग्रहालय, इंदौर मे संग्रहीत यज्ञ वराह

चित्र 2

चित्र 2 ऐरण, मध्यप्रदेश की यज्ञ वराह

चित्र 3

चित्र 3 गुजरी महल संग्रहालय, ग्वालियर मे संग्रहीत यज्ञ वराह

REFERENCES

Agrawala, P. K. (1970). Early Indian Sculpture. Munshiram Manoharlal.
Banerjea, J. N. (1941). The Development of Hindu Iconography. University of Calcutta.
Chadhar, M. L. (2019). Art Heritage of Eran, District Sagar (Madhya Pradesh). Indira Gandhi National Tribal University.
Coomaraswamy, A. K. (1985). The Dance of Shiva. Dover Publications.
Dasgupta, E. (2023). Eran's Ancient Legacy and Vishnu's Avatar: Exploring the Varaha Statue in Madhya Pradesh. Travel + Leisure.
Kramrisch, S. (1976). The Hindu Temple. Motilal Banarsidass.
Mishra, I. (2009). Pratima Vigyan. Madhya Pradesh Hindi Granth Akademi.
Rao, T. A. G. (1914). Elements of Hindu Iconography (Vol. 1, Parts 1–2). The Law Printing House.
Eggeling, J. (Trans.). (n.d.). Shatapatha Brahmana.
Sinha, K., and Chandra, D. (1990). Bharatiy Pratima Vigyan. Ayan Publication.
Sivaramamurti, C. (1977). Indian Sculpture. Allied Publishers.
Soni, G. (2024). Vishnu ke Dashavatar Pratima Mein Buddha ki Parikalpana. Kala Ke Aayam.
Kramrisch, S. (Trans.). (n.d.). Vishnudharmottara Purana.
Archaeological Survey of India. (n.d.). Catalogue of Sculptures: Central Museum, Indore. Archaeological Survey of India.